साहित्य समाज और महिला सशक्तिकरण

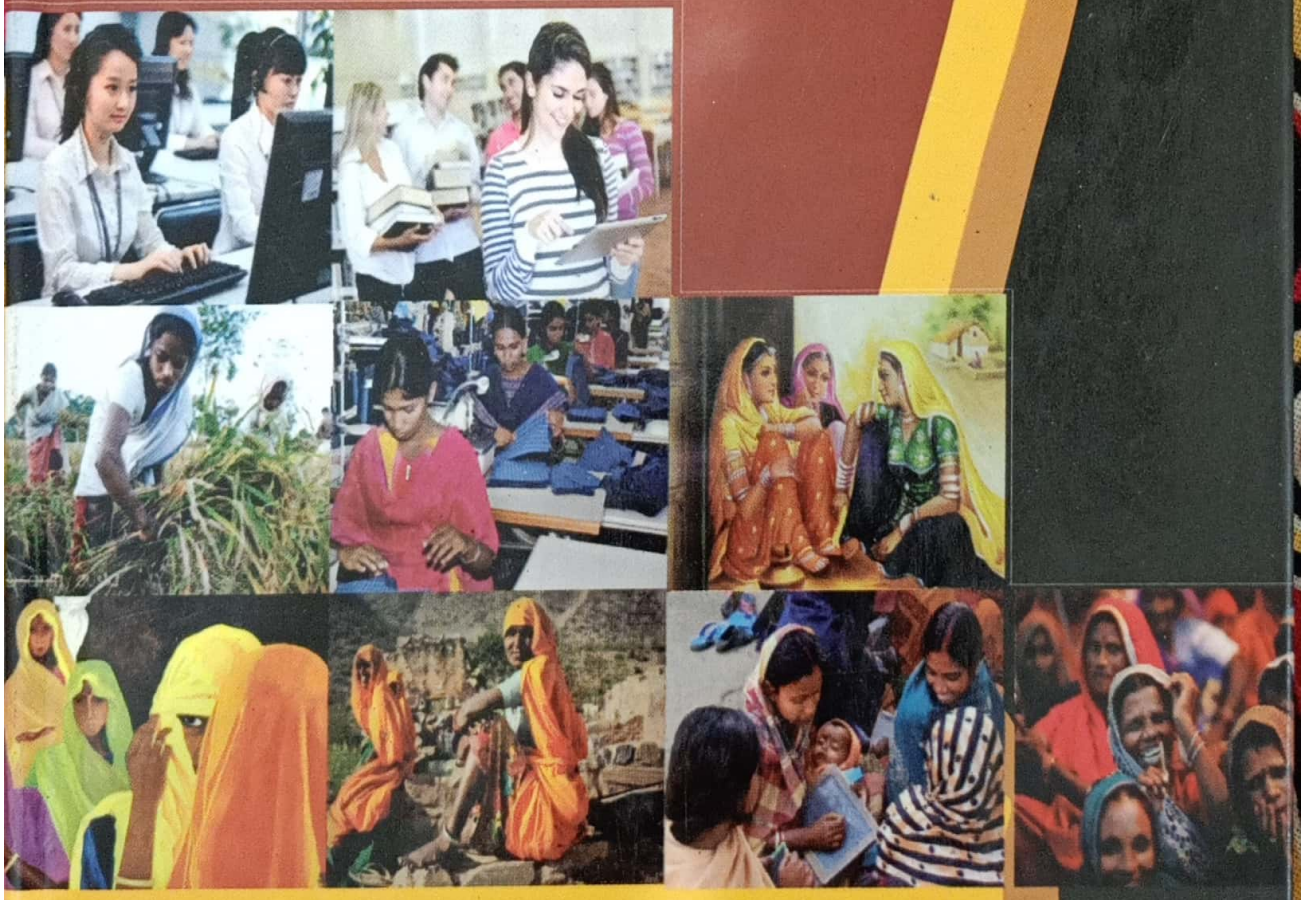

डॉ. हेमन्त पाल घृतलहरे

Scanned by CamScanner

प्रकाशकः
मंगलम पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स
के-129 3½ पुस्ता मेनरोड, नीयर ग्रीन वेल्स स्कूल,
गौतम विहार, दिल्ली-110053
फोनः 011-22945677, मो. 9868572512, 9968367559
Email: manglam.books2007@rediffmail.com
manglam.publishers@ rediffmail.com

साहित्य समाज और महिला सशक्तिकरण

© सर्वाधिकार लेखकाधीन

प्रथम संस्करण 2015
ISBN 978-93-82816-25-6
₹ 795/-

* इस पुस्तक का कोई अंश फोटो कापी सूचना संग्रह साधनों के माध्यम से उपयोग करने के पूर्व लेखक एवं प्रकाशक की लिखित सूचना अनिवार्य है।
* परिवाद यदि हो तो न्यायायिक क्षेत्र विलाशपुर (छ.ग.) ही होगा।
* पुस्तक में दी गई जानकारी प्राथमिक एवं द्वितीय स्रोत के आधार पर लेखक द्वारा रचित है। जिसमें टंकड़ सम्बन्धी मानव भूल स्वाभाविक है। ध्यान दिलाने पर आगामी संस्करण में सुधार संभव है।
* किसी प्रकार के रचनात्मक सुझाव का स्वागत है।

भारत में मुद्रितः

रविन्द्र कुमार यादव द्वारा मंगलम पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली-53 के लिए प्रकाशित एवं शहाबउद्दीन कम्प्यूटर, दिल्ली-द्वारा शब्द संयोजन तथा सचिन प्रिंटर्स, मौजपुर, दिल्ली-53 में मुद्रित।

Scanned by CamScanner

अनुक्रमणिका

1. महिला सशक्तिकरण की अवधारणा : आवश्यकता और स्वरूप
   – डॉ. अनुसूया अग्रवाल (पृष्ठ क्र. 1–4)
2. महिला सशक्तिकरण : ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य एवं भावी दिशाएं
   – डॉ. एस.एल. सोनवाने (पृष्ठ क्र. 5–12)
3. धार्मिक ग्रंथ और स्त्री अस्मिता : सतयुग से साईबर युग तक
   – डॉ. स्वामीराम बंजारे 'सरल' (पृष्ठ क्र. 13–20)
4. हिन्दी कविता में 'स्त्री लेखन और स्त्री अस्मिता'
   – डॉ. गोपीराम शर्मा (पृष्ठ क्र. 21–25)
5. हिन्दी कविता में नारी समाज –
   – प्रो. राजकुमार लहरे (पृष्ठ क्र. 26–32)
6. समकालीन कविता और स्त्री अस्मिता : स्त्री मुक्ति का विराट स्वप्न
   – डॉ. रामकिंकर पाण्डेय (पृष्ठ क्र. 33–41)
7. साहित्य में स्त्री विमर्श – डॉ. बी.आर. महिपाल (पृष्ठ क्र. 42–44)
8. पवन करण की कविता में स्त्री मन के भीतर के सौंदर्य की तलाश
   – डॉ. संजय राठौड़ (पृष्ठ क्र. 45–49)
9. नयी सदी का कथा साहित्य : स्त्री विमर्श बनाम यौन विमर्श
   – डॉ. हेमन्त पाल घृतलहरे (पृष्ठ क्र. 50–62)
10. उदय प्रकाश की कहानियों में चित्रित नारी चेतना तथा संघर्ष
    – प्रा. विजय लक्ष्मण साठे (पृष्ठ क्र. 63–69)
11. साहित्य और समाज में महिला : मेहरून्निसा परवेज के कथा सहित्य के संदर्भ में – डॉ. रमेश टण्डन (पृष्ठ क्र. 70–71)
12. वैश्वीकरण के दौर में नारी चेतना – डॉ. आर.पी.टण्डन(पृष्ठ क्र. 72–75)
13. भारती समाज में महिला – प्रो. भुवन सिंह राज, प्रो. नवीन कुमार रेलवानी,
    – कु. प्रीति साहू (पृष्ठ क्र. 76–83)
14. महिला शिक्षा एवं अधिकारों के सजग प्रहरी
    – डॉ. एम.एल. पाटले (पृष्ठ क्र. 84–89)
15. नारी चेतना और निर्व्यक्तीकरण : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन
    – प्रो. जी.सी. भारद्वाज (पृष्ठ क्र. 90–93)
16. समाज की मुस्कान नार – डॉ. राजाराम बनर्जी (पृष्ठ क्र. 94–100)
17. साहित्य समाज और महिला सशक्तिकरण : चुनौती एवं संभावनाएं
    – डॉ. आर.बी. सोनवानी, प्रो. सुश्री मथुरा महिलांगे (पृष्ठ क्र. 101–104)
18. पंचायती राज व्यवस्था और महिला सशक्तिकरण

Scanned by CamScanner

– श्रीमती उमानंदिनी जायसवाल, श्री शैलेष कुमार मिश्रा (पृष्ठ क्र. 105–113)
19. पंचायती राज व्यवस्था और महिला सशक्तिकरण : चुनौतियां व विकल्प
– डॉ. अरविन्द्र कुमार जांगड़े (पृष्ठ क्र. 114–119)
20. राजनीति में महिला आरक्षण का लोकतंत्र पर प्रभाव
– डॉ. एल.एल. निराला, श्री विनोद कुमार साहू (पृष्ठ क्र. 120–126)
21. स्व–सहायता समूह एवं महिला सशक्तिकरण
– डॉ. कल्याणी जैन (पृष्ठ क्र. 127–133)
22. महिला सशक्तिकरण : संवैधानिक प्रावधान व सुरक्षा उपाय – एक अध्ययन – प्रो. टी.एल. मिर्झा, डॉ. बी.के.डहरिया (पृष्ठ क्र. 134–141)
23. महिला सशक्तिकरण की नीतियां
– डॉ.(श्रीमती) मंजूलता कश्यप, डॉ. श्याम कुमार मधुकर (पृष्ठ क्र. 142–154)
24. महिला सशक्तिकरण हेतु केन्द्र सरकार के आर्थिक प्रयास –
– डॉ. देवेन्द्र शुक्ल (पृष्ठ क्र. 155–161)
25. नारी जाति के प्रथम उद्धारक – गुरू घासीदास
– डॉ. हेमन्त पाल घृतलहर (पृष्ठ क्र. 162–175)
26. महिला उत्थान में डॉ. अम्बेडकर की भूमिका : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण
– डॉ. के.पी.कुर्रे (पृष्ठ क्र. 176–182)
27. Women empowerment
- Dr.(Smt.) Sanju Pandey, Prof. Chandrakala Patel. (पृष्ठ क्र. 183–187)
28. Women empowerment : Propositions of Indian women writers
- Shailesh Kumar Mishra, Bhupendra Kumar Patel.(पृष्ठ क्र. 188–201)

Scanned by CamScanner

9

नयी सदी का कथा साहित्य : स्त्री विमर्श बनाम यौन विमर्श

डॉ. हेमन्त पाल घृतलहरे
विभागाध्यक्ष–हिन्दी
शासकीय महाविद्यालय, हसौद
जिला – जांजगीर–चांपा (छ.ग.)

स्त्री की देह सदा पुरूष के लिये कुतूहल और आकर्षण का विषय रही है। समाज स्त्री और पुरूष दोनों से मिलकर पूरा होता है। प्रकृति स्त्री व पुरूष के माध्यम से अभिव्यक्त होती है। समूचे विश्व में ऋणात्मक एवं धनात्मक आवेशों से पदार्थ एवं ऊर्जा का कार्य संचालन होता है। समूचा जगत नर मादा शक्तियों के मिलन से निर्मित एवं विकसित होती है, गतिमान होती है। यह भी सच है कि जहॉ दो होते हैं वहॉ पर दोनों अपने–अपने प्रभाव को बढ़ाने की कोशिश करते हैं। यह स्वाभाविक है, विकास का हिस्सा है। लेकिन जब कोई एक दूसरे पर हावी हो जाता है तब व्यवस्था सम से विषम हो जाती है, अप्राकृतिक, अस्वाभाविक हो जाती है।

वस्तुतः स्त्री व पुरूष, जीवन की गाड़ी के दो पहिए हैं जिसमें समानता एवं सामंजस्य होना नितांत आवश्यक है। परंतु समाज के विकास क्रम में एक समय पुरूष हावी हो गया। पुरूष साहसिक काम करते–करत मजबूत हो गया। उसके तन, मन के साथ अहंकार भी मजबूत हो गया। उसे लगने लगा कि वही प्रमुख है और स्त्री उसके उपभोग की वस्तु मात्र है। पुरूष स्त्री का मालिक बन गया और उसके सारे फैसले स्वयं करने लगा।

"प्रभुत्वशाली पुरूषवादी समूह ने उसे समाज एवं साहित्य से बहिष्कृत

Scanned by CamScanner

रखा। स्त्री को कुछ खास क्षेत्रों तक कार्य करने की अनुमति दी गयी। वह प्रतिबंधित क्षेत्र था जहां से बाहर झांकना मना था।"[1]

यह एक षड़यंत्र था, स्त्री को पुरूषवादी विचारों के पिंजरे में कैद करने का। फिर आगे चलकर स्त्री को पिता, पति, पुत्र (पुरूष के विविध रूपों) के दायरे में कैद कर दिया गया। यही से स्त्रीवादी और पुरूषवादी नजरिये का पृथक–पृथक विकास हुआ।

"पुरूषवादी नजरिये से सामान्य मानवीय व्यवहार वह था जो स्त्री का ध्वंस करें, हेय माने छद्म व्याख्या के जरिए उसके सत्य को छिपाए। इस प्रक्रिया की परिणति यह हुई कि स्त्री खंडित हुई। स्त्री की उपेक्षा हुई, स्त्री सभ्यता अधूरी नजर आने लगी। . . . . साहित्य से स्त्री का जो रूप उभरा वह आमतौर पर स्टीरियो टाइप था।"[2]

इस तरह समाज, साहित्य, इतिहास एवं जीवन के सभी क्षेत्रों में स्त्री के स्वतंत्र अस्तित्व का लोप हो गया। पुरूष की दासी की भूमिका हेतु स्त्री की बाध्यता हो गई। धर्म के नाम पर भी स्त्री को डरा–धमकाकर शोषण किया गया। शारीरिक, मानसिक, पारिवरिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक सभी रूपों में वह पुरूष पर आश्रित बना दी गई।

पुरूष सदैव से स्त्री देह को भोगने की कामना से भरा रहा और भरा हुआ है। इसलिये उसने स्त्री देह को भोगना अपना चरम लक्ष्य बनाया। यहॉ तक कि नगरवधू और देवदासी की व्यवस्था भी कर डाली। एक तरफ वह पत्नी के रूप में 'कुमारी' चाहता है और दूसरी ओर वह स्त्रीमात्र के कौमार्य को भंग कर देना चाहता है।

स्त्री विमर्श आने पर हमे पता चलता है कि स्त्री होने की पीड़ा और समस्यायें क्या है। स्त्री अस्मिता स्त्री लेखन के माध्यम से ही आ पाया है। लेकिन आज का युग बाजारवादी युग। है इस युग में सब कुछ बाजारू हो गया है। और मजे की बात यह है कि किसी को यह अहसास भी नहीं होता कि वे बाजारू हो गये। आज स्त्री विमर्श के साथ भी यही हो रहा है, यह मेरी चिंता है।

कल के साहित्यकारों, चित्रकारों, कलाकारों, गायको, मूर्तिकारों ने स्त्री देह का मनमाना उपयोग किया। घनानंद, बिहारी, विद्यापति से लेकर

Scanned by CamScanner

अज्ञेय तक किसी ने स्त्री अस्मिता की परवाह नहीं की। इन्होंने स्त्री चित्रण में ही अपना पौरूष दिखाया फिर भी ये श्रेष्ठ कवियों में गिने जाते हैं। इन्होंने स्त्री के यौन को भुनाया है। स्त्री दलन की कड़ी में यौन की चर्चा अति महत्वपूर्ण है।

"स्त्री दलन के संदर्भ में इन्हीं दिनों सुलामिथ फायरस्टोन ने यह कहा कि स्त्री वास्तव में जन्म से स्त्रीकरण का शिकार है। स्त्री होने के लिये उसे पुरूष सत्ता का वर्चस्व स्वीकारना पड़ता है। . . . इसी को लिंगीकरण अर्थात जेंडराइजेशन की प्रक्रिया कहते है। . . . केवल आर्थिक या राजनैतिक संस्थाओं में सुधार लाने से ही स्त्री को दलन से मुक्ति नहीं मिलेगी। आवश्यकता है कि स्त्रीकरण की इस यौनवादी व्यवस्था को रूपांतरित किया जाये।[3]

स्त्री के यौन जीवन से पुरूष के आक्रमण एवं वर्चस्व को समाप्त किया जाना अत्यंत आवश्यक है। पुरूष सत्ता ही स्त्री की कामना व वासना की जरूरतों का निर्धारण कर रही है। पुरूष स्त्री यौनांगों को ताले मे बंद कर चाबी अपने पास रख लेना चाहता है, यही नहीं बल्कि कहीं भी रहकर वह अपने माऊस के बटन से इसे कंट्रोल भी करना चाहता है। स्त्री का जननांग आज भी उसकी सम्पदा है, स्त्री की नहीं। यह अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है, राजनीतिक गुलामी से भी ज्यादा।

"पहली बार नारीवादिनों ने यह स्पष्ट किया कि अपने यौन जीवन में स्त्री को किस–किस प्रकार के उत्पीड़न एवं हिंसा का शिकार होना होता है। बलात्कार, अश्लील साहित्य, अनैच्छिक मातृत्व तथा जन्म निरोध एवं बाध्यकारी इतरलिंगी कामुकता जैसे मुददों को उठाने से यह स्पष्ट हुआ कि यौन जीवन के प्रसंग में स्त्री को पुरूष की इच्छा के अधीन रहना पड़ता है। तथा इन्हीं संस्थाओं के माध्यम से पुरूष ने अपना वर्चस्व स्थापित किया हुआ है।"[4]

यह वर्चस्व आज भी कायम है। पुरूषवादी सोच ब्राम्हणवादी सोच की तरह है। जैसे दलित को दलने के नये–नये रास्ते निकाले जाते हैं। वैसे ही स्त्री पर आधिपत्य बनाये रखने के लिये भी अनगिनत उपाय कर लिये जाते हैं।

आज स्त्री के अस्मिता और सशक्तिकरण की चर्चा पूरे विश्व में जोर शोर से हो रही है। स्त्री और पुरूष दोनों ही इस यज्ञ में अपनी–अपनी आहुतियां दे रहे हैं, पर मेरी दृष्टि में आज भी जल रही है स्त्री और स्त्री की अस्मिता। आज

Scanned by CamScanner

भी उसकी पहचान स्त्री देह तक समेटने का भयानकषड़यंत्र दिखायी देता है। कारण चाहे जो भी हों, पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव, स्वच्छंदता, मीडिया का जाल, बाजारवाद का प्रभाव, उत्तर आधुनिकता की होड़, सांस्कृतिक पतन, भोगवाद व पूंजीवाद का विकास या फिर स्त्री देह का आकर्षण। लेकिन समाचार, विज्ञापन, मीडिया से लेकर साहित्य तक आज भी स्त्री केन्द्र में नहीं है, बल्कि स्त्री देह ही केन्द्र में है। स्त्री विमर्श का उद्देश्य है स्त्री अस्मिता की तलाश एवं स्त्री के व्यक्तिव का स्वतंत्र विकास व स्वतंत्र पहचान की स्थापना। पर क्या ये हो पा रहा है? हमारे सामने यह एक यक्ष प्रश्न अब तक खड़ा है।

स्त्री विमर्श के बहाने साहित्य में यौन विमर्श आ गया है। इस यौन विमर्श की केंचुली को त्यागे बिना स्त्री विमर्श का स्वरूप स्पष्ट नहीं हो सकेगा।

"कैथरीन मैक्नीन जैसी महत्वपूर्ण नारीवादिन के अनुसार पुरूष को स्त्री पर वर्चस्व मिलता है क्योंकि वह यौन जीवन में स्त्री को पीड़ित कर सकता है। कामना के स्तर पर स्त्री से यह अपेक्षा की जाती है किह वह न केवल पुरूष की कामेच्छा के प्रति समर्पण करे बल्कि पुरूष कामना के उद्दीपन का कारण भी बने।"[5] यानी पुरूष के मनोरंजन, तनरंजन, चितरंजन का दायित्व स्त्री पर है। इतना ही नहीं पुरूष जब अपनी एक ही पत्नी से ऊब जाता है तो उसे अपना 'स्वाद' बदलने के लिये 'नयी' भी चाहिये।

जया जादवानी की कहानी 'समन्दर में सूखती नदी' का उद्धरण देखिये– . . . अब उसे पत्नी की देह एक पका हुआ कद्दू लगती थी . . . जिस पर बाज वक्त वह खुद को निष्प्राण लेटा हुआ पाता था। उसे कुछ नया चाहिये था . . . नया जहां वहा खुद को भूल सके और कद्दू की गंध को गुलाबों की गंध में परिवर्तित कर सके।'[6]

पुरूष यौन सुख की अतृप्त वासना लिये जीता है और उसे हर बार 'नया' से पूरा करने की जद्दोजहद में स्वयं बीत जाता है। इसी जद्दोजहत में संसार की मजबूरियों के बीच कोई स्त्री देह उसे खेलने को मिल जाती है।

'समन्दर में सूखती नदी' की नायिका एक सेक्सवर्कर है जो मजबूरी में इस धंधे में आयी। वह इस काम को करना तो नहीं चाहती पर विकल्प नहीं है – " वह क्यों खप रही है अपने कुनबे के लिए? कभी–कभी कटुता से वह सोचती है, . . . शराबी बाप, कैंसर और गरीबी से जूझती माँ . . . दो छोटे

Scanned by CamScanner

भाई . . . बहिन की पढ़ाई का बोझ . . . इस रास्ते के किसी भी मोड़ पर वह कोई सुन्दर दृश्य नहीं देख पायेगी . . . यह वह अच्छी तरह जानती है।"[7]

स्त्री इतनी स्वार्थी नहीं होती कि केवल अपना सुख–आराम देख ले। वह तो गिरे से गिरे हालत में भी परमार्थ देखती है, समूह हित देखती है। उसके विचार परिपक्व होते हैं स्त्री जानती है उसका भविष्य क्या है। पुरूष द्वन्द्व में फॅसा रहता है पर स्त्री की दृष्टि बिल्कुल साफ होती है – "जी करता है . . . भाग जाये किसी अमीर हरामी के साथ . . . उससे क्या होगा? निचोड़ेगा जब तक रस है . . . फिर फेंक देगा चुसी गुठली की तरह . . .।[8]

स्त्री जानती है कि मूल्य उसका नहीं उसके यौवन का है, ताजा देह का है। पुरूष केवल यौन आनंद की आकांक्षा लिये आयेगा और वस्तु की तरह उपयोग कर चला जायेगा। तो आखिर शाषण ही कराना है तो घर बसा के दासी बनकर क्यूं? यौनकर्मी बनकर अपनी मालकियत तो है। पत्नी बनकर तो वह भी छिन जाती है। ऐसा कटु सत्य हमें चिंतन मनन करने को विवश कर देता है।

यौन शोषण से पीड़ित स्त्री के मन में भाग्य और भगवान के लिये भी स्थान नहीं, वह सारा पाखंड खूब समझती है। "कभी–कभी गुस्से में सोचती है . . ईश्वर कहीं भिल जाये रास्ते में तो वह उसे पकड़कर पीट दे . .।[9] इसी भाग्य और भगवान के नाम पर डरा धमकाकर तो सदियों से उसका शोषण चल रहा है। आज स्त्री चालाकियों को खूब समझती है। वह जानती है कि पुरूष की चिकनी चुपड़ी बातें केवल यौन सुख के लिये है, स्त्री से उसे कोई मतलब नहीं। वासना में सभी पुरूष एक जैसे होते है इसका उसे अनुभव है। साथ ही इस बाजार में स्त्री की अस्मिता पर भी वह प्रश्न उठाती है –

"पाकेट में पैसा और नीचे ताकत है तो हर पुरूष एक जैसा है?" मैं हूँ कौन? मेरे मन में इज्जत बचेगी या जायेगी। हू ब्लडी केयर्स अबाऊट इट"।[10] स्त्री अपनी नजर में ऊंचा उठना चाहती है। दूसरों की नजर से अपने कद का आकलन करने के बजाय खुद की निगाह में खुद के वजूद को तौलने की उसकी कोशिश दिखाई देती है।

पुरूष भूखा है। खा–खाकर भी सदियों से भूखा है। पुरूष के लिये उसकी भूख से बढ़कर कुछ नहीं। नायक कहता है – "भूख किसी भी किस्म

Scanned by CamScanner

की हो, उसे अच्छे से जानना और तब उसे पूरा करना चाहिये। हममें से अधिकतर सारी उम्र इसलिए भूखे रहते हैं कि वे अपनी भूख को पहचान ही नहीं पाते।[11]

स्त्री पुरूष के भूख को खूब समझती है, वह कहती है – " भूख ने ही मुझे जन्म दिया . . . भूख ने ही मेरी परवरिश की है। भूख ही मुझे साधकर पतंग सा आसमॉ में उड़ाती है, भूख ही काटकर मुझे धरती में मिलाती है। मेरी मिट्टी बहुत सारी भूखों ने मिलकर गूंथी है" . . . माल वही है, काम वही है, उसी को सजाने के नये–नये नुस्खे आदमी औरत को सोचने पड़ते हैं। 'दाल और रोटी' भी रोज–रोज खायी नहीं जाती हर बार नया छौंक, नये मसाले, नये बरतन, नया प्रेजेंटेशन।"[12]

स्त्री आत्मचिंतन कर रही है। जीवन के विस्तृत फलक को जैसा है वैसा देखने की कोशिश कर रही है। वह इस पीड़ा से अत्यंत छटपटा रही है कि कोई है जो उसकी देह, उसके मन, उसके प्रेम, उसकी भावनाओं और संवेदनाओं से खेल रहा है। उसकी समझ आज परिपूर्णता की ओर है वह जान चुकी है कि उसके जीवन से कोई खेल रहा है। वह इस आरोपित खेल को बंद करना चाहती है। खेलने और नही खेलने तथा कब कैसे, किसके साथ खेलना है इसका निर्णय स्त्री स्वयं करना चाहती है। स्त्री विमर्श का मूल है कि स्त्री अपनी स्वामिनी खुद हो।

स्त्री की पीड़ा मेरे देखे बहुत हद तक यौन की पीड़ा है। स्त्री पर होने वाले आक्रमण और उसके जीवन में मंडराते हुए खतरे करीब–करीब सभी यौन खतरे है। इस यौन पीड़ा का संबंध केवल देह तक नहीं है वरन् देह को तोड़कर, मन को चीरकर, हृदय को फाड़ते हुए वह आत्मा को झकझोर डाल रहा है। जब कभी कोई सहृदय पुरूष इस पीड़ा को अनुभव करता है, तब कह उठता है –

"नारी केवल योनि नहीं रे, वह भी मानवी प्रतिष्ठित।
मुक्त करो नारी को वह फिर , रहे न नर पर अवसित।।"

पर यह कथन यथार्थ के धरातल पर कितना लागू होता है, हम सब जानते हैं। स्त्री को भी यौन आवश्यकता तो होती है, वह भी मनुष्य है। पर उसकी फिक्र किसी को नहीं, उसके पति को भी नहीं। पति सिर्फ अपनी

Scanned by CamScanner

संतुष्टि को प्रमुखता देता है। पत्नी की परवाह बहुत कम लोग ही करते है।

स्त्री यह जानती है कि संसार में लोग चाहे आत्मा, परमात्मा की कितनी ही चर्चा कर लें लेकिन ध्यान सदा स्त्री के जिस्म पर ही रहता है। आज की स्त्री बेबाक है वह डर, भय, संकोच से सत्य को नहीं छिपाती बल्कि यथार्थ में जीती है, यथार्थ (पीड़ा, अनुभव) को व्यक्त करती है –

"लेने भी तो यही आते हो तुम लोग . . हम भी सदियों से जानती हैं कि लेके ही मानोगे। शादियां और क्यों होती हैं? बड़ी–बड़ी बातों के पीछे सच्चाई यही है कि तुम लोगों को जिस्म चाहिये। कभी किसी को देखा है मन या आत्मा जैसी मांग करते? किताबी बातें हैं ये?[13]

स्त्री आज अत्यंत जागरूक है। यदि वह बाजार में है तो भी उसको यह बोध तो है कि वह वस्तु बना दी गई है। आज जब यह बोध हो गया है, तो निश्चित रूप से स्त्री देर–सबेर बाजार से मुक्त होकर रहेगी उसकी छटपटाहट इसीलिये तो है। स्त्री बाजार से घिरी होकर भी बाजार से अलग है –

"जब कोई बाजार में उतरता है एक चीज ही होता है, तब कहाँ का मन . . . कहाँ की आत्मा?[14]

स्त्री की सजगता उसे एक दिन इस बाजार के बाहर लाकर एक स्वतंत्र अस्मिता प्रदान करेगी, ऐसा लगता है। इस अस्मिता के लिये वह निरंतर संघर्ष कर रही है, हर कहीं, हर समय, हर किसी से, शायद अपने आपसे भी। उसे तरस और सहानुभूति नहीं चाहिये। आज स्त्री अपने जीवन युद्ध को अपने दम पर जीतना चाहती है। यह उसके युद्धरत होने की सार्थकता है।

समाज स्वयं तो स्त्री देह का उपभोग जी भर के कर लेना चाहता है पर जब स्त्री अपनी देह का निर्णय स्वयं लेने लगती है तो मर्यादा, प्रथा, परम्परा, समाज, संस्कार, सभ्यता, संस्कृति सभी उसके दुश्मन हो जाते हैं। पर धन्य है आज की स्त्री वह कांटों से नही घबराती वह जवाब देती है माकूल जवाब।

" . . . लगभग सभी औरते अपना जिस्म देती हैं और जो नहीं देती, शिद्दत से देना चाहती है। वैसे भी यह संसार का सबसे पुराना पेशा है। आखिरकार यह हमारी चीज है और हम इसे जैसे चाहे बरत सकते हैं और पाप–पुण्य की तमाम अवधारणाओं वाली पोथियों को हम जला देना चाहती है।"[15] ये है जवाब। ईंट का जवाब पत्थर से। कहानी के माध्यम से जया

Scanned by CamScanner

जादवानी जी ने स्त्री की ओर से समाज को यह जवाब दिया है और ठेकेदारों का मुंह बंद करने की कोशिश की है।

स्त्री जानती है कि संसार के लिये स्त्री का यौन ही सब कुछ है। इसलिये अपने यौन का निर्णय लेने के लिये आज वह खुद तैयार है, इसके लिये आज वह कंपती नहीं, डरती नहीं, झिझकती नही, उसका साहस उसे प्राचीन 'पराधीन', 'ताड़न के अधिकारी' स्त्री से पृथक करता है। कहानी की नायिका के संवाद देखिये – "मुझे अपना जिस्म देने में बिल्कुल एतराज नहीं है, बशर्ते मुझे उसकी कीमत मिलती रहे। तुम्हारी बीवियां और क्या करती हैं? वे तो हमसे भी ज्यादा कीमत लेती है जिसे तुम खुशी–खुशी देते हो।"[16]

नायिका यह कहने की कोशिश कर रही है कि पति–पत्नी के बीच भी लेन–देन चल रहा है। पत्नी को गहने, कपड़े, सामान चाहिये, पति को यौन उद्दीपन और यौन संतुष्टि। आखिर यह भी तो स्त्री देह का व्यापार ही हुआ, लेकिन व्यवस्थित तरीके से, समाज स्वीकृत, विधि स्वीकृत। इसमें भी स्त्री देह के परे प्रेम कहां है? यदि पुरूष स्त्री की मनचाही वस्तु न लाये तो पत्नी यौन सुख नहीं देती और स्त्री यौन सुख के लिये मना कर दे (भले ही तबियत खराब के कारण) तो गृह युद्ध स्वस्फूर्त हो जाते है।

स्त्री आज जिंदगी को अपने मन से जीना चाहती है जीवन के अच्छे बुरे सबकी जवाबदारी अपने सिर लेकर अपने ढंग से जीना चाहती है।

". . . लाइफ इज अनप्रिडिक्टेबल इटसेल्फ। बस मेरी एक ख्वाहिश है एक दिन मैं अपने मन का जी लूँ।"[17]

लेकिन विरोध का स्वर जब व्यापक होता है तब अतिरेक पर आकर कई सकारात्मक चीजों का भी विरोध करने लगता है। आज की नायिका स्त्री को पुरूष के पूरक के रूप में नही बल्कि प्रतिद्वंद्वी के रूप में देखती है –

"स्त्री और पुरूष तो एक दूसरे को हराने के लिए बने है, एक दूसरे को पूरा करने के लिए नहीं . . .।[18] स्त्री की यह सोच क्यों आयी यह तथ्य किसी से छिपा नहीं है पर यदि यह आगे बढ़ गई तब भी उसे पीड़ा होगी क्योंकि तब जीवन फिर अधूरा–अधूरा रहेगा। और स्त्री अस्मिता और स्त्री विमर्श के यह उद्देश्य कदापि नहीं है कि स्त्री एक हाशिये (अति दीनता) से दूसरे हाशिये (एकांतिकता) पर चली जाये। फिर उसके जीवन में पतझर ही होगा

Scanned by CamScanner

बसंत नहीं। स्त्री विमर्श स्त्री के जीवन में सहज बसंत चाहता है। बनन मे, बागन मे, बगरो बसंत है।

स्त्री के इस बसंत पर पुरूष की नजर कल भी थी, आज भी है और शायद कल भी रहेगी। पर ये कैसा षड़यंत्र कि जो पुरूष करता है वह मर्यादा में है और जो स्त्री करती है वह अमर्यादित हो जाता है। एक ही वस्तु को मापने के लिये पैमाने अलग–अलग क्यूँ?

रामजन्म पाठक की कहानी 'हम किनरे लग भी सकते थे' मे नायक (प्रकाश) और नायिका (चित्रा) के यौन संबंध का चित्रात्मक वर्णन लेखन ने रसमय ढंग से भाव विभोर होकर किया है –

"इसके बाद सीमाएं, सीमा नही रही। मर्यादाएं, मर्यादा नहीं रही। शरीरो ने अपना काम संभला। रसायनों ने मोर्चेबंदी की। भाव बहुत चढ़ गये और दॉव भी। दोनों ने जानने योग्य सब कुछ जाना . . . चुम्बनों की बाढ़ आयी हुई है. . . प्रति चुम्बन की मॉग करती हुई। लारों और थूकों का सोता फूट पड़ा है . . . उसने मुझे गिरफ्त में लिया था। उतना कि जितना लिया जा सकता था। . . . उसकी सुंदरता लाजवाब है . . . और दाहक भी . . . और मारक भी। तुम ध्यान दो तो पाओगे कि वह सिर्फ और सिर्फ चूमे जाने के लिए बनी थी। उसकी यातना यही थी, उसे प्यार न मिला था।"[19]

यह वर्णन पुरूषवादी और भोगवादी विचारधारा का ही एक हिस्सा है। स्त्री प्रेम भी दे रही है, देह भी दे रही है, पुरूष उसका मजा भी ले रहा है, फिर भी पुरूष चरित्रवान है और स्त्री के चरित्र पर प्रश्न उठा रहा है। एक तरफ उसे वस्तु के रूप में भोग रहा है और धन्यवाद भी नहीं देता। उल्टे पुरूषोचित वृत्ति से निन्दित भी कर रहा है। यहॉ भी पुरूष को लगता है कि जिस (स्त्री) को प्यार नहीं मिला था, उसे प्रेम (वीर्य) दान देकर वह स्त्री पर अहसान ही कर रहा है, इसलिये वह सर्वथा निर्दोष है, श्रेष्ठ है।

पुरूष को यौन सुख में व्यवधान खटकता है। वह रोज–रोज नये–नये तरीके से यौन सुख भोग लेना चाहता है पर जब स्त्री उसे मांग के अनुरूप उपलब्ध न हो तो स्त्री पर सारा दोष मढ़ता है। आत्म संयम के बजाय स्त्री निंदा उसका लक्ष्य बन जाता है।

"मै तुम्हें छलात्कारी कहता हूँ, बलात्कारी की तर्ज पर। इसलिए नहीं कि

Scanned by CamScanner

जादवानी जी ने स्त्री की ओर से समाज को यह जवाब दिया है और ठेकेदारों का मुंह बंद करने की कोशिश की है।

स्त्री जानती है कि संसार के लिये स्त्री का यौन ही सब कुछ है। इसलिये अपने यौन का निर्णय लेने के लिये आज वह खुद तैयार है, इसके लिये आज वह कंपती नहीं, डरती नहीं, झिझकती नही, उसका साहस उसे प्राचीन 'पराधीन', 'ताड़न के अधिकारी' स्त्री से पृथक करता है। कहानी की नायिका के संवाद देखिये – "मुझे अपना जिस्म देने में बिल्कुल एतराज नहीं है, बशर्ते मुझे उसकी कीमत मिलती रहे। तुम्हारी बीवियां और क्या करती हैं? वे तो हमसे भी ज्यादा कीमत लेती है जिसे तुम खुशी–खुशी देते हो।"[16]

नायिका यह कहने की कोशिश कर रही है कि पति–पत्नी के बीच भी लेन–देन चल रहा है। पत्नी को गहने, कपड़े, सामान चाहिये, पति को यौन उद्दीपन और यौन संतुष्टि। आखिर यह भी तो स्त्री देह का व्यापार ही हुआ, लेकिन व्यवस्थित तरीके से, समाज स्वीकृत, विधि स्वीकृत। इसमें भी स्त्री देह के परे प्रेम कहां है? यदि पुरूष स्त्री की मनचाही वस्तु न लाये तो पत्नी यौन सुख नहीं देती और स्त्री यौन सुख के लिये मना कर दे (भले ही तबियत खराब के कारण) तो गृह युद्ध स्वस्फूर्त हो जाते है।

स्त्री आज जिंदगी को अपने मन से जीना चाहती है जीवन के अच्छे बुरे सबकी जवाबदारी अपने सिर लेकर अपने ढंग से जीना चाहती है।

". . . लाइफ इज अनप्रिडिक्टेबल इटसेल्फ। बस मेरी एक ख्वाहिश है एक दिन मैं अपने मन का जी लूँ।"[17]

लेकिन विरोध का स्वर जब व्यापक होता है तब अतिरेक पर आकर कई सकारात्मक चीजों का भी विरोध करने लगता है। आज की नायिका स्त्री को पुरूष के पूरक के रूप में नही बल्कि प्रतिद्वंद्वी के रूप में देखती है –

"स्त्री और पुरूष तो एक दूसरे को हराने के लिए बने है, एक दूसरे को पूरा करने के लिए नहीं . . .।[18] स्त्री की यह सोच क्यों आयी यह तथ्य किसी से छिपा नहीं है पर यदि यह आगे बढ़ गई तब भी उसे पीड़ा होगी क्योंकि तब जीवन फिर अधूरा–अधूरा रहेगा। और स्त्री अस्मिता और स्त्री विमर्श के यह उद्देश्य कदापि नहीं है कि स्त्री एक हाशिये (अति दीनता) से दूसरे हाशिये (एकांतिकता) पर चली जाये। फिर उसके जीवन में पतझर ही होगा

Scanned by CamScanner

बसंत नहीं। स्त्री विमर्श स्त्री के जीवन में सहज बसंत चाहता है। बनन मे, बागन मे, बगरो बसंत है।

स्त्री के इस बसंत पर पुरूष की नजर कल भी थी, आज भी है और शायद कल भी रहेगी। पर ये कैसा षड़यंत्र कि जो पुरूष करता है वह मर्यादा में है और जो स्त्री करती है वह अमर्यादित हो जाता है। एक ही वस्तु को मापने के लिये पैमाने अलग–अलग क्यूँ?

रामजन्म पाठक की कहानी 'हम किनरे लग भी सकते थे' मे नायक (प्रकाश) और नायिका (चित्रा) के यौन संबंध का चित्रात्मक वर्णन लेखन ने रसमय ढंग से भाव विभोर होकर किया है –

"इसके बाद सीमाएं, सीमा नही रही। मर्यादाएं, मर्यादा नहीं रही। शरीरो ने अपना काम संभला। रसायनों ने मोर्चेबंदी की। भाव बहुत चढ़ गये और दॉव भी। दोनों ने जानने योग्य सब कुछ जाना . . . चुम्बनों की बाढ़ आयी हुई है. . . प्रति चुम्बन की मॉग करती हुई। लारों और थूकों का सोता फूट पड़ा है . . . उसने मुझे गिरफ्त में लिया था। उतना कि जितना लिया जा सकता था। . . . उसकी सुंदरता लाजवाब है . . . और दाहक भी . . . और मारक भी। तुम ध्यान दो तो पाओगे कि वह सिर्फ और सिर्फ चूमे जाने के लिए बनी थी। उसकी यातना यही थी, उसे प्यार न मिला था।"[19]

यह वर्णन पुरूषवादी और भोगवादी विचारधारा का ही एक हिस्सा है। स्त्री प्रेम भी दे रही है, देह भी दे रही है, पुरूष उसका मजा भी ले रहा है, फिर भी पुरूष चरित्रवान है और स्त्री के चरित्र पर प्रश्न उठा रहा है। एक तरफ उसे वस्तु के रूप में भोग रहा है और धन्यवाद भी नहीं देता। उल्टे पुरूषोचित वृत्ति से निन्दित भी कर रहा है। यहॉ भी पुरूष को लगता है कि जिस (स्त्री) को प्यार नहीं मिला था, उसे प्रेम (वीर्य) दान देकर वह स्त्री पर अहसान ही कर रहा है, इसलिये वह सर्वथा निर्दोष है, श्रेष्ठ है।

पुरूष को यौन सुख में व्यवधान खटकता है। वह रोज–रोज नये–नये तरीके से यौन सुख भोग लेना चाहता है पर जब स्त्री उसे मांग के अनुरूप उपलब्ध न हो तो स्त्री पर सारा दोष मढ़ता है। आत्म संयम के बजाय स्त्री निंदा उसका लक्ष्य बन जाता है।

"मै तुम्हें छलात्कारी कहता हूँ, बलात्कारी की तर्ज पर। इसलिए नहीं कि

Scanned by CamScanner

तुमने मुझे भड़काया (यह जुर्म तुम कुबूल कर चुकी हो) बल्कि, इसलिए कि भडकाकर भाग गई।"[20]

पुरूष यदि कामुक भी होता है तो इसका श्रेय स्त्री को जाता है। जिसका स्वयं पर इतना भी नियंत्रण नहीं उसके पौरूष को क्या कहें? शब्द निर्माण के लिये यह प्रश्न भाषा वैज्ञानिकों के लिये छोड़ देते हैं।

यह उत्तप्त (कामुक) पुरूष एक दिन शहर की बदनाम बस्ती में चला जाता है, यौन तृप्ति के लिए एक पेशेवर युवती के साथ नायक हड़बड़ी, भूख और अतृप्ति के साथ काम निपटाता है और जाते–जाते नायिका (चित्रा) को तुम कभी सुखी नहीं रहोगी का शाप दे जाता है। क्योंकि चित्रा अब इसकी काम वासना को शांत करने का साधन नहीं बन पाई। स्त्री ने यौन तृप्ति दी तो कुलटा, नहीं दी तो छलात्कारी। आश्चर्य नहीं कि पुरूष का ऐसा चित्त यदि किसी अन्य स्त्री के यौन हिंसा व यौन आक्रमण में प्रवृत्त हो जाये।

जाने–माने कथाकार सत्येन कुमार ने आधुनिक स्त्री के यौन संदर्भ को अपने दूसरे उपन्यास 'नदी को याद नहीं' में चित्रित किया है। इस उपन्यास में खानदान का चिराग (बेटा) पैदा नहीं कर पाने से उपेक्षित (बेटियां है पर बेटा नहीं है) कथा की नायिका (पायल रानी) जो कि समाज सेविका भी है, आधुनिक हैं, की यौन उत्कण्ठा व कामकला का सूक्ष्म एवं विस्तृत चित्रण है। सलिल (नायक) के साथ पायल रानी (नायिका) के कामकला का वर्णन भी स्त्री देह के उपभोग का लक्ष्य प्रतीत होता है। नायक और लेखक दोनों स्त्री देह के सौन्दर्य में डूबते उतराते से है – "जैसे किसी ग्रीक देवी की प्रतिमा खड़ी थी सामने एक–एक अंग में भरपूर लावण्य लिए, अक्षत सौंदर्य से भरपूर। उनकी सुडौल जाँघों और नितम्बों के कसाव को देखकर भी कहना मुश्किल था कि वह दो बच्चों की माँ थी। . . . और वे भरे हुए स्तन कैसा स्पर्श था उनका उस रात। . . . और मचल उठा था मेरे भीतर के अंधेरे में समा जाने को . . .।[21]

यहाँ पर एक अधिक उम्र की विवाहित स्त्री (दो बेटियों की माँ) अपने से कम उम्र के सलिल (नायक) के साथ काम क्रिया और यौनाचारो में संलिप्त है और इसके लिये स्थिति परिस्थिति को जिम्मेदार ठहरा रही है। अनेक कहानियों, उपन्यासों एवं फिल्मों में एक शादीशुदा एवं अधेड़ व्यक्ति जब

Scanned by CamScanner

बसंत नहीं। स्त्री विमर्श स्त्री के जीवन में सहज बसंत चाहता है। वनन मे, बागन मे, बगरो बसंत है।

स्त्री के इस बसंत पर पुरूष की नजर कल भी थी, आज भी है और शायद कल भी रहेगी। पर ये कैसा षड़यंत्र कि जो पुरूष करता है वह मर्यादा में है और जो स्त्री करती है वह अमर्यादित हो जाता है। एक ही वस्तु को मापने के लिये पैमाने अलग–अलग क्यूँ?

रामजन्म पाठक की कहानी 'हम किनरे लग भी सकते थे' मे नायक (प्रकाश) और नायिका (चित्रा) के यौन संबंध का चित्रात्मक वर्णन लेखन ने रसमय ढंग से भाव विभोर होकर किया है –

"इसके बाद सीमाएं, सीमा नही रही। मर्यादाएं, मर्यादा नहीं रही। शरीरो ने अपना काम संभला। रसायनों ने मोर्चेबंदी की। भाव बहुत चढ़ गये और दॉव भी। दोनों ने जानने योग्य सब कुछ जाना . . . चुम्बनों की बाढ़ आयी हुई है. . . प्रति चुम्बन की मॉग करती हुई। लारों और थूकों का सोता फूट पड़ा है . . . उसने मुझे गिरफ्त में लिया था। उतना कि जितना लिया जा सकता था। . . . उसकी सुंदरता लाजवाब है . . . और दाहक भी . . . और मारक भी। तुम ध्यान दो तो पाओगे कि वह सिर्फ और सिर्फ चूमे जाने के लिए बनी थी। उसकी यातना यही थी, उसे प्यार न मिला था।"[19]

यह वर्णन पुरूषवादी और भोगवादी विचारधारा का ही एक हिस्सा है। स्त्री प्रेम भी दे रही है, देह भी दे रही है, पुरूष उसका मजा भी ले रहा है, फिर भी पुरूष चरित्रवान है और स्त्री के चरित्र पर प्रश्न उठा रहा है। एक तरफ उसे वस्तु के रूप में भोग रहा है और धन्यवाद भी नहीं देता। उल्टे पुरूषोचित वृत्ति से निन्दित भी कर रहा है। यहॉ भी पुरूष को लगता है कि जिस (स्त्री) को प्यार नहीं मिला था, उसे प्रेम (वीर्य) दान देकर वह स्त्री पर अहसान ही कर रहा है, इसलिये वह सर्वथा निर्दोष है, श्रेष्ठ है।

पुरूष को यौन सुख में व्यवधान खटकता है। वह रोज–रोज नये–नये तरीके से यौन सुख भोग लेना चाहता है पर जब स्त्री उसे मांग के अनुरूप उपलब्ध न हो तो स्त्री पर सारा दोष मढ़ता है। आत्म संयम के बजाय स्त्री निंदा उसका लक्ष्य बन जाता है।

"मै तुम्हें छलात्कारी कहता हूँ, बलात्कारी की तर्ज पर। इसलिए नहीं कि

Scanned by CamScanner

तुमने मुझे भड़काया (यह जुर्म तुम कुबूल कर चुकी हो) बल्कि, इसलिए कि भडकाकर भाग गई।"[20]

पुरूष यदि कामुक भी होता है तो इसका श्रेय स्त्री को जाता है। जिसका स्वयं पर इतना भी नियंत्रण नहीं उसके पौरूष को क्या कहें? शब्द निर्माण के लिये यह प्रश्न भाषा वैज्ञानिकों के लिये छोड़ देते हैं।

यह उत्तप्त (कामुक) पुरूष एक दिन शहर की बदनाम बस्ती में चला जाता है, यौन तृप्ति के लिए एक पेशेवर युवती के साथ नायक हड़बड़ी, भूख और अतृप्ति के साथ काम निपटाता है और जाते–जाते नायिका (चित्रा) को तुम कभी सुखी नहीं रहोगी का शाप दे जाता है। क्योंकि चित्रा अब इसकी काम वासना को शांत करने का साधन नहीं बन पाई। स्त्री ने यौन तृप्ति दी तो कुलटा, नहीं दी तो छलात्कारी। आश्चर्य नहीं कि पुरूष का ऐसा चित्त यदि किसी अन्य स्त्री के यौन हिंसा व यौन आक्रमण में प्रवृत्त हो जाये।

जाने–माने कथाकार सत्येन कुमार ने आधुनिक स्त्री के यौन संदर्भ को अपने दूसरे उपन्यास 'नदी को याद नहीं' में चित्रित किया है। इस उपन्यास में खानदान का चिराग (बेटा) पैदा नहीं कर पाने से उपेक्षित (बेटियां है पर बेटा नहीं है) कथा की नायिका (पायल रानी) जो कि समाज सेविका भी है, आधुनिक हैं, की यौन उत्कण्ठा व कामकला का सूक्ष्म एवं विस्तृत चित्रण है। सलिल (नायक) के साथ पायल रानी (नायिका) के कामकला का वर्णन भी स्त्री देह के उपभोग का लक्ष्य प्रतीत होता है। नायक और लेखक दोनों स्त्री देह के सौन्दर्य में डूबते उतराते से है – "जैसे किसी ग्रीक देवी की प्रतिमा खड़ी थी सामने एक–एक अंग में भरपूर लावण्य लिए, अक्षत सौंदर्य से भरपूर। उनकी सुडौल जाँघों और नितम्बों के कसाव को देखकर भी कहना मुश्किल था कि वह दो बच्चों की माँ थी। . . . और वे भरे हुए स्तन कैसा स्पर्श था उनका उस रात। . . . और मचल उठा था मेरे भीतर के अंधेरे में समा जाने को . . .।[21]

यहाँ पर एक अधिक उम्र की विवाहित स्त्री (दो बेटियों की माँ) अपने से कम उम्र के सलिल (नायक) के साथ काम क्रिया और यौनाचारो में संलिप्त है और इसके लिये स्थिति परिस्थिति को जिम्मेदार ठहरा रही है। अनेक कहानियों, उपन्यासों एवं फिल्मों में एक शादीशुदा एवं अधेड़ व्यक्ति जब

Scanned by CamScanner

अनेक औरतों के चक्कर में पड़ जाता है और उनसे शारीरिक सम्बन्ध बना लेता है तब रचनाकार (पुरूष पक्षीय दृष्टिकोण से) उसके पीछे कोई ठोस कारण बताकर उसे मर्यादित सिद्ध कर देते हैं परन्तु इस उपन्यास में पायल रानी (नायिका) अंत में आत्महत्या कर लेती है। क्योंकि वह स्त्री है? माना कि उसका आचरण सही नहीं है तो क्या उसे मर जाना चाहियें? पश्चाताप या आत्म सुधार का अवसर ही नहीं? यदि यहीं पर पुरूष होता तो (जैसे–फिल्म नो एन्ट्री, घरवाली–बाहरवाली, पति पत्नी और वो, उपन्यास गुनाहों का देवता) उसे समाज स्वीमार कर लेता। स्त्री अस्वीकृत? और पुरूष स्वीकृत? यही पुरूषवादी सोच है।

उपन्यास का नायक (सलिल) भी यौन क्रिया में बराबर का सहभागी था। बल्कि कहना यूँ चाहिये कि वह स्त्री देह का यौनानंद भरपूर ले रहा था – " . . . लगा कि सारी देह में एक लावा–सा भरा है जो अब खामोशी से उबलना शुरू हो गया था। . . . मैंने उनको अपनी बाँहों में बुरी तरह भींच लिया और . . . मेरी देह को किसी ज्वालामुखी ने अपने आप में इस तरह से समा लिया था कि वह भूचाल मेरे अंग–अंग को झकझोरे दे रहा था . . .।[22] इस यौन रस के आनंद सागर में डूबकर भी नायक निर्दोष ही निकला। यह रस स्त्री के लिये कीचड़ और पुरूष के लिये गंगा कैसे बन जाता है? आज तक मेरी समझ से परे है।

ये कथाएं बहुत कुछ बोलती है। एक तो यह कि पुरूषवादी सोच अब भी पुरातन पंथी, परम्परावादी और रूढ़ है। वह स्त्री को स्वतंत्र देखना नहीं चाहता, कम से कम यौन के मामले में तो बिल्कुल भी नहीं।

स्त्री विमर्श और यौन (काम) विमर्श निश्चित रूप से दो अलग–अलग बाते हैं। यौन विमर्श कभी स्त्री विमर्श का स्थान नहीं ले सकेगा। लेकिन स्त्री देह का बाजार कल गर्म था, आज ज्यादा गर्म है, आने वाले समय में उबलता हुआ होगा। यदि इस बाजार की आग से स्त्रीत्व को बाहर नहीं निकाला गया तो स्त्री की अस्मिता 'स्त्रीत्व के राख' के रूप में पहचानी जायेगी।

स्त्री देह का आकर्षण तो सहज एवं प्राकृतिक है, पर उसका बाजारीकरण न होने पाये और यौन विमर्श, स्त्री विमर्श को हाशिये पर न डाल दे इन बातों की चिंता करना बहुत जरूरी है। क्योंकि इस पूजीवादी युग में कुछ भी हो सकता है। सामंतयुग से लेकर अब तक" स्त्री के गुप्त अंगों को पुरूष अपनी

Scanned by CamScanner

व्यक्तिगत संपदा मानता है जबकि अपने अंगो को प्राचीन, धार्मिक, व्यापक, पितृसत्ता का प्रतीक जो स्त्री पर जबरन राज करता है। अश्लील साहित्य विशुद्ध रूप से नारी–विरोधी प्रचार है।"[23] इसलिये अश्लीलता और स्त्री देह के बाजारीकरण को रोकना जरूरी है।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता जरूरी है। स्त्री अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और भी जरूरी है जैसे – जया जादवानी की कहानी 'समंदर में सूखती नदी' स्त्री विमर्श का अच्छा उदाहरण कहा जा सकता है। लेकिन अन्य कथाएं भी क्या इसी श्रेणी में शामिल करने योग्य है?

स्त्री देह और यौन वर्णन तक ही सीमित रहना वर्तमान कथा साहित्य के लिये उचित नहीं। नई सदी के कथा साहित्य द्वारा पुरूष चित्त की कमजोरियो को दूर करने व स्त्री अस्मिता को समान रूप से स्थापित करते हुए स्त्री–पुरूष के सम्यक संबंधों को पुनरूज्जीवित करना जरूरी है। स्त्री साहित्य और स्त्री विमर्श की चुनौतियां और दायित्व बढ़ गये है। साहित्यकार, पत्रकार, समाजसेवी सबको दायित्व निभाना है। और विशेषकर स्त्री को। क्योंकि सवाल स्त्री का है। स्त्री, देह में रहकर भी देह व यौन से अलग कुछ है? वह क्या है? इसी की खोज स्त्री विमर्श को करनी है।

संदर्भ-सूची :-

1 रचना (द्विमासिक पत्रिका) संपा. – डॉ. शिवकुमार अवस्थी, म. प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, मई जून – 2001 में प्रकाशित जगदीश्वर चतुर्वेदी जी का लेख "स्त्री साहित्य का इतिहास : संदर्भ हिन्दी पृष्ठ क्र 3

2 वही पृष्ठ – 3

3 अतीत होती सदी और स्त्री का भविष्य – संपा. राजेन्द्र यादव, अर्चना वर्मा, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, दूसरी आवृत्ति 2011 में प्रकाशित लेख स्त्री विमर्श : इतिहास में अपनी जगह – ले. प्रभा खेतान पृ क्र 186

4 वही पृष्ठ – 186

5 वही पृष्ठ – 186

6 कथादेष (मासिक पत्रिका) – संपा. हरिनारायण, सहयात्रा प्रकाशन दिल्ली सितंबर 2012 में प्रकाशित जया जादवानी की कहानी – 'समन्दर में सूखती नदी' पृ. क्र. 12

7 वही पृष्ठ – 13

8 वही पृष्ठ – 13

9 वही पृष्ठ – 13

Scanned by CamScanner

10 वही पृष्ठ – 13
11 वही पृष्ठ – 15
12 वही पृष्ठ – 15
13 वही पृष्ठ – 16
14 वही पृष्ठ – 16
15 वही पृष्ठ – 17
16 वही पृष्ठ – 17
17 वही पृष्ठ – 17
18 वही पृष्ठ – 18
19 कथादेष (मासिक पत्रिका), संपा. हरिनारायण , सहयात्रा दिल्ली सितंबर 2012 में प्रकाशित राम जन्म पाठक की कहानी 'हम किनारे लग भी सकते थे' पृ. क्र – 24
20 वही पृष्ठ – 25
21 उपन्यास समय और संवेदना – विजय बहादुर सिंह, वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली, आवृत्ति 2013 पृ. क्र. –261
22 वही पृष्ठ – 261
23 औरत होने की सजा – अरविंद जैन, राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली, आवृत्ति 2011, पृ. क्र. – 137

---00---

Scanned by CamScanner